रामप्रसाद बिस्मिल की फांसी

शिवेंद्र श्रीवास्तव

बिस्मिल ने फांसी के फंदे को देखकर कहा-

मालिक तेरी रज़ा रहे और तू ही तू रहे
बाकी न मैं रहूं, न मेरी आरज़ू रहे
जब तक कि तन में जान रगों में लहू रहे
तेरा ही ज़िक्र या तेरी ही जुस्तजू रहे..

..... फिर उन्हें वो शानदार शहादत मिली जिसकी चाहत भारत के सच्चे सपूतों को हमेशा रहती रही है. जब बनारसी दास चतुर्वेदी के द्वारा लिखित किताब %आत्मकथा रामप्रसाद बिस्मिल% में यह बातें पढ़ते हैं तो मूछों पर ताव देता एक नौजवान का चेहरा नज़र आने लगता है जो ब्रितानियां हुकूमत की आंखों में आंखें डाल कर कह रहा है..

सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है
देखना है ज़ोर कितना बाज़ू-ए-क़ातिल में है

आज के ही दिन यानी 11 जून 1897 में उत्तर प्रदेश के शाहजहांपुर जिले में क्रांतिकारी रामप्रसाद बिस्मिल का जन्म हुआ था. ये भारत मां के वो सच्चे सपूत थे जिन्होंने ऐतिहासिक काकोरी कांड को अपने साथियों के साथ मिलकर अंजाम दिया. हालांकि बाद में बिस्मिल को गिरफ्तार कर लिया गया और 19 दिसंबर, 1927 को उन्हें गोरखपुर की जेल में फांसी पर चढ़ा दिया गया.

काकोरी कांड के अलावा रामप्रसाद बिस्मिल को उनकी बहुआयामी प्रतिभा के लिए भी याद किया जाता है. उन्हें शायर या कवि, साहित्यकार या इतिहासकार या फिर अनुवादक कुछ भी कहें वो सब सही होगा. बिस्मिल ने कुल 11 किताबें लिखी थी. हालांकि सारी अंग्रेजी हुकूमत ने जब्त कर ली.

सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है ये ऐसी पंक्ति है जो सुनते ही बिस्मिल का चेहरा याद आ जाता है. कई लोगों का मानना है कि ये ग़ज़ल खुद राम प्रसाद बिस्मिल ने लिखी थी लेकिन ये सच नहीं है. दरअसल इसके असली रचयिता रामप्रसाद बिस्मिल नहीं बल्कि बिस्मिल अज़ीमाबादी हैं. हालांकि बिस्मिल ने इस ग़ज़ल को इतना गाया कि यह उनके नाम से प्रसिद्ध हो गई.

इस ग़ज़ल पर कई इतिहासकार शोध कर चुके हैं. यहां तक की बिस्मिल अज़ीमाबादी के पोते मुनव्वर हसन ने भी इस ग़ज़ल को लेकर अपनी बात रखते हुए कहा था कि उनके दादा की ये ग़ज़ल 1922 में ही सबाहनामक पत्रिका में छपी थी. बाद में अंग्रेजी हुकूमत ने इस ग़ज़ल पर प्रतिबंध लगा दी.बता दें कि बिस्मिल अज़ीमाबादी का असली नाम सैय्यद शाह मोहम्मद हसन था और वो पटना के पास बिगहा गांव में 1901 में पैदा हुए थे.

काकोरी कांड और बिस्मिल समेत चार आज़ादी के सिपाहियों की शहादत

भारत के स्वाधीनता आंदोलन में काकोरी कांड एक महत्वपूर्ण घटना रही. दरअसल 1922 में महात्मा गांधी द्वारा चलाए गए असहयोग आंदोलन अपने चरम पर था कि तभी गोरखपुर जिले के चौरा-चौरी में एक घटना हुई. भड़के हुए कुछ आंदोलकारियों ने एक थाने को घेरकर आग लगा दी जिसमें 22-23 पुलिसकर्मी जलकर मर गए थे. इस हिंसक घटना से दुखी होकर महात्मा गांधी ने तुरंत असहयोग आंदोलन वापस ले लिया.

असहयोग आंदोलन बंद करने से निराशा का माहौल छा गया था और फिर नौ अगस्त 1925 को क्रांतिकारियों ने काकोरी में एक ट्रेन में डकैती डाली थी. इसी घटना को काकोरी कांड के नाम से जाना जाता है.

काकोरी कांड का मकसद अंग्रेजी सरकार का खजाना लूटकर उन पैसों से हथियार खरीदना था ताकि अंग्रेजों के खिलाफ युद्ध को मजबूती मिल सके. काकोरी ट्रेन डकैती में खजाना लूटने वाले क्रांतिकारी हिंदुस्तान रिपब्लिक एसोसिएशन (एचआरए) के सदस्य थे.

9 अगस्त 1925, रात 2 बजकर 42 मिनट पर साहरण-पुर लखनऊ पैसेंजर ट्रेन को कुछ क्रांतिकारियों ने काकोरी में रोका और ट्रेन को लूटा. काकोरी कांड का नेतृत्व रामप्रसाद बिस्मिल ने किया था.

इस घटना के बाद बड़ी संख्या में अग्रेजी सरकार ने गिरफ्तारियां की. सब पर मुकदमा लगभग 10 महीने तक लखनऊ की अदालत में चला और रामप्रसाद बिस्मिल, राजेंद्रनाथ लाहिड़ी, रोशन सिंह और अशफाक उल्ला खां को फांसी की सजा सुनाई गई....

चारों ने एक-एक कर फांसी के फंदे को चूमा...

17 दिसंबर 1927 को सबसे पहले गांडा जेल में राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को फांसी दी गई. उनके अंतिम शब्द थे-" हमारी मृत्यु व्यर्थ नहीं जाएगी" 19 दिसंबर, 1927 को पं. रामप्रसाद बिस्मिल को गोरखपुर जेल में फांसी दी गई और उनके अंतिम शब्द थे- "मैं ब्रिटिश साम्राज्य का विनाश चाहता हू द्य

काकोरी कांड के तीसरे शहीद ठाकुर रोशन सिंह को इलाहाबाद में फांसी दी गई. उन्होंने अपने मित्र को पत्र लिखते हुए कहा था, हमारे शास्त्रों में लिखा है, जो आदमी धर्मयुद्ध में प्राण देता है, उसकी वही गति होती है जो जंगल में रहकर तपस्या करने वालों की.

काकोरी कांड के चौथे शहीद अशफाक उल्ला खां थे. उन्हें फैजाबाद में फांसी दी गई. वे बहुत खुशी के साथ कुरान शरीफ का बस्ता कंधे पर लटकाए और कलमा पढ़ते हुए फांसी के तख्ते के पास गए. तख्ते को उन्होंने चूमा और अंतिम गीत गाया

तंग आकर हम भी उनके जुल्म से बेदाद से
चल दिए सुए अदम जिंदाने फैजाबाद से

इससे पहले की आज के राष्ट्रवाद/देशभक्ति बनाम तब का राष्ट्रवाद/देशभक्ति पर चर्चा करें किसी शायर की ये खूबसूरत पंक्ति पढ़ लेना बेहद जरूरी है, जिसमें हमारे देश की वो सेक्युलर छवी दिखाई देती है जो असल में मुल्क की पहचान है.

हिन्दुतां की शान हैं अशफाक और बिस्मिल
दो जिस्म एक जान हैं अशफाक और बिस्मिल

उस कौम को बेड़ी कोई पहना नहीं सकता
जिस कौम पर कुर्बान हैं अशफाक और बिस्मिल

जिसकी हर एक धुन है मिल्त(राष्ट्र) की रागिनी
उस बांसुरी की तान हैं अशफाक और बिस्मिल

अशफाक और बिस्मिल हैं मुसलमान में हिन्दू
हिन्दू में मुसलमान में हैं अशफाक और बिस्मिल

पिछले कुछ वर्षों से देश में 'राष्ट्रवाद' और देशभक्ति जैसे शब्द सर्वाधिक चर्चा में हैं. एक बड़ा तबका ये तय करने में लगा है कि कौन सच्चा देशभक्त है और कौन नहीं. 'राष्ट्रवाद और देशभक्ति' जैसे शब्दों का इस्तेमाल कर नफरत फैलाई जा रही है. हर कोई अपने हिसाब से राष्ट्रवाद की परिभाषा भी तय कर रहा है. वो परिभाषा जो महात्मा गांधी, राम प्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्लाह खान या रबीन्द्रनाथ टैगोर की परिभाषा से कोषों दूर है, आज उसी को सच बताया जा रहा है. ऐसी स्थिति में आज फिर से विचार करने की जरूरत है कि क्या राष्ट्रवाद धर्म पर आधारित हो सकता है. अगर आपका जवाब हां है तो आपने जरूर राष्ट्रवाद की परिभाषा कहीं व्हाट्सएप पर पढ़ी होगी क्योंकि अगर आप टैगोर का राष्ट्रवाद या देश भक्ति पर विचार पढ़ेंगे तो पता चलेगा कि उनके लिए राष्ट्र में रहने वाले लोग सर्वाधिक महत्वपूर्ण थे और वो लोग किसी एक या दो मज़हब से नहीं बल्कि सभी से मज़हबों से संबंध रखने वाले थे. टैगौर जानते थे कि भारतीय समाज, संस्कृति और परंपरा में खुल कर अपनी बात कहने की प्रथा है इसलिए उन्होंने साफ-साफ कहा था,'जब तक मैं जिंदा हूं, मानवता के ऊपर देशभक्ति की जीत हावी नहीं होने दूंगा.' इतना ही नहीं उन्होंने राष्ट्रवाद को 1917 में ही मानवता के लिए खतरा बता दिया था.

टैगोर ऐसा कह पाए क्योंकि उस वक्त विचारों पर बौद्धिक बहस हुआ करता था. न कि आज की तरह अलग विचार रखने वालों को या असहमत होने वालों को दूसरे मुल्क़ भेज देने की बात होती थी.

टैगोर के राष्ट्रवाद पर विचार और आज के राष्ट्रवाद में कितना अंतर है इसको समझने के लिए नोबेल पुरस्कार विजेता और प्रख्यात अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन की किताब द आरगुमेंटेटिव इंडियन का जिक्र जरूरी हो जाता है. इस किताब में एक चैप्टर टैगोर के नाम है. इसका शिर्षक है-'टैगोर और उनका भारत. जब आप टैगोर और उनका भारत अध्याय पढ़ेंगे तो देखेंगे इसमें अमर्त्य सेन ने टैगोर के विचार बताते हुए लिखा है कि टैगोर का राष्ट्रवाद उस राष्ट्रवाद से बिल्कुल अलग है जो पहले विश्व युद्ध के बाद इटली और जर्मनी मॉडल से उपजी राष्ट्रवाद की अवधारणा है.

टैगोर का कहना था कि देशभक्ति चारदीवारी से बाहर हमे विचारों से जुड़ने से रोकती है और इसलिए भारत को राष्ट्र की संकरी मान्यता को छोड़कर व्यापक अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाना चाहिए.

टैगोर के अलावा महात्मा गांधी की बात करें तो हमेशा वो राष्ट्रवाद की अवधारणा को वसुधैव कुटुम्बकम की भावना के साथ आगे बढ़ाते रहे. ठीक इसी तरह राम प्रसाद बिस्मिल का 'राष्ट्र' भी कभी अशफाक उल्लाह खान के बिना पूरा नहीं हो सकता था.

आज इतने सालों बाद जब हम गांधी, बिस्मिल, अशफाक उल्लाह खान जैसे अनेक महान स्वतंत्रता आंदोलन के सिपाहियों के बारे में सोचते हैं और उनकी देशभक्ति और राष्ट्रवाद की तुलना आज से करते हैं तो लगता है कि आज लोगों ने नकली राष्ट्रवाद का झंडा और नफरत का एजेंडा चला रखा है, जिससे सबसे ज्यादा चोट देश के सेक्युलर सोच को लगा है.

अंग्रेजी हुकूमत की नींद उड़ाने वाले महान क्रांतिकारी रामप्रसाद बिस्मिल को कोटिशः नमन.

विशेष/हाचीको के बारे में

अशोक कुमार पाण्डे

आज से ठीक डेढ़ सौ बरस पहले यानी 19 नवम्बर 1872 को जन्मा ईज़ाबूरो उएनो बावन साल की उम्र तक अपनी साधारण प्रतिभा के साथ जीवन में जितनी दूर जा सकता था, जा चुका था. टोक्यो यूनीवर्सिटी में कृषि विज्ञान पढ़ाने वाले इस प्रोफेसर के जीवन में आगे भी किसी ऐसे उल्लेखनीय के घटने का अवसर भी नहीं था. चार-छः सालों में उसने रिटायर होकर अपनी पार्टनर याइको साकानो के साथ बुढ़ापा गुजारने की योजनाएं बनाना शुरू करना था.

उएनो लम्बे समय से एक कुत्ता पालने की फिराक में था और उसे उम्दा पहाड़ी नस्ल के किसी विशुद्ध जापानी कुत्ते की तलाश थी लेकिन सही इत्तफाक नहीं बन पा रहा था. आखिरकार 1924 की जनवरी में अपने एक छात्र के बताने पर उएनो ने उस ज़माने के लिहाज़ से तीस येन की बड़ी रकम चुका कर टोक्यो के उत्तर में ख़ासी दूरी पर स्थित एक फ़ार्म से अकीता प्रजाति का एक दो माह का पिल्ला हासिल कर किया. पिल्ले को फ़ार्म से टोक्यो पहुँचने में रेलगाड़ी से बीस घंटे का सफ़र भी करना पड़ा.

पिल्ले के आने से उएनो के घर में रोशनी आ गई. उएनो ने पिल्ले का नाम धरा हाची. जापानी भाषा में इसका अर्थ हुआ आठ. वहां यह एक बेहद शुभ संख्या मानी जाती है. उसे मोहब्बत से हाचीको भी कहा जाता था. हाची अपने मालिक का ऐसा भक्त बना कि उसने रोज़ उएनो को छोड़ने और लेने उस रेलवे स्टेशन तक जाने का मामूल बांध लिया जहाँ से उसका यूनिवर्सिटी आना-जाना होता था. अपनी प्रजाति के हिसाब से हाची जल्द ही एक हट्टा-कट्टा वयस्क बन गया. उएनो के घर से स्टेशन के बीच दो दफा आते-जाते तमाम लोग उसके मोहिल व्यक्तित्व से जुड़ गए. मालिक के अलावा वह अनेक दूसरे लोगों का भी दोस्त बन गया.

करीब डेढ़ साल तक यह सिलसिला चला जब 21 मई 1925 के दिन अपनी प्रयोगशाला में काम करते हुए उएनो को दिल का दौरा पड़ा और वहीं उसकी मौत हो गयी. हाची उस शाम भी मालिक को लेना आया. उसने ट्रेन से अपने मालिक के उतरने का इंतज़ार किया. जब ट्रेन चली गयी वह वापस घर लौट आया.

उएनो की मौत के बाद उसके घर में आने वाले एक माली ने हाची को अपने साथ रखा लेकिन उस शाम के बाद से अपनी मौत के दिन तक हाची अगली तमाम शामों को यूनीवर्सिटी स्टेशन से शिबूया स्टेशन पर आने

वाली लोकल ट्रेन के आने के नियत समय अपने मालिक के इंतज़ार में पहुंचा. ऐसा उसने कुछ हफ्ते या महीने नहीं बल्कि कुल दस साल तक किया. बिला नागा. वह रोज उएनो के उतरने का इंतज़ार करता और लौट जाता.

शुरू में उसे ऐसा करते देखते लोगों को उस पर लाड़ आया. फिर हैरत होने लगी. आखिरकार वे उसके मुरीद बन गए. उसके प्रति उनके मन में कैसी श्रद्धा उमड़ती होगी इसकी कल्पना करने के लिए आपको इस पोस्ट के साथ लगा फोटो गौर से देखना चाहिए. मृत हाची के सामने नतमस्तक लोग कौन-क्या होंगे आप अपने हिसाब से अनुमान लगा सकते हैं. हाची के बारे में कुछ भी अनुमान लगाने की जरूरत नहीं.

हाची के प्रेम, दर्द और अकेलेपन की यह कथा, जिसके बारे में आपमें से ज्यादातर को मालूम ही होगा, समूची दुनिया में कुत्तों की वफादारी के उच्चतम आदर्श के रूप में स्थापित हो चुकी है. टोक्यो के शिबूया स्टेशन पर जीते जी किंवदंती बन चुके इस कुत्ते की मूर्ति उसी की उपस्थिति में स्थापित की गयी. जिस जगह वह स्थापित है उसे आज किसी तीर्थ का महात्म्य हासिल है. हाल के सालों में टोक्यो के भीतर हाची के मालिक ईज़ाबूरो उएनो की प्रतिमा भी स्थापित की गई. ईज़ाबूरो उएनो की यह मूर्ति तस्दीक करती है कि मोहब्बत आज भी दुनिया की सबसे अधिक पूजी जाने वाली शै है. वफ़ा उससे भी बड़ी.

फर्ज कीजिये वह शानदार पहाड़ी कुत्ता न होता तो यूनिवर्सिटी के बच्चों को खेतों का उपजाऊपन बढ़ाने जैसे बोझिल और उबाऊ विषय पर लेक्चर देने वाले उस प्रोफ़ेसर को कौन याद रखता.